बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 162

जेटली युग

पूर्व केंद्रीय मंत्री अरुण जेटली को उनके मित्रों, सहकर्मियों और संपूर्ण राष्ट्र द्वारा कई वजहों से याद रखा जाएगा। भावप्रवण वक्ता, कुशल रणनीतिकार और प्रखर अधिवक्ता होने के अलावा जेटली ऐसे दिल्लीवासी थे जिनकी मित्रता तमाम राजनीतिक हलकों में थी। वह राजनेताओं की मौजूदा पीढ़ी के बीच सेतु का काम करते थे। वह जीवन में जितने लोगों से मिले, उन सबके जीवन को उन्होंने प्रभावित किया। यही कारण है कि वह कई मुद्दों पर भारतीय जनता पार्टी और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के भी पसंदीदा व्यक्ति थे। मोदी सरकार के प्रथम कार्यकाल के दौरान संसद में उनके हस्तक्षेप केवल उनके मंत्रालयों तक सीमित नहीं रहते थे। यहां तक कि स्वास्थ्य खराब होने के बाद जब उनसे बहुत कम लोग मिल पाते थे तब उन्होंने नियमित रूप से अपने ब्लॉग के जरिये सरकार के अहम कदमों को तार्किक ढंग से उचित ठहराया।

बतौर अधिवक्ता और सांसद जेटली का करियर विशिष्ट रहा। उन्होंने मोदी सरकार के पहले कार्यकाल में बतौर वित्त मंत्री सबसे अहम काम को अंजाम दिया। सन 2013 में लगभग भुगतान संतुलन के घाटे की स्थिति से गुजर रही भारतीय अर्थव्यवस्था 2014 में मोदी के कार्यकाल की शुरुआत के समय बहुत अच्छी स्थिति में नहीं थी।

बतौर वित्त मंत्री जेटली के कार्यकाल के दौरान कई तरह के सुधारों का क्रियान्वयन किया गया। उदाहरण के लिए चौदहवें वित्त आयोग की अनुशंसाओं के अनुरूप सरकार ने राज्यों को दिए जाने वाले कर संसाधनों में इजाफा किया। इससे न केवल राज्यों की व्यय करने की क्षमता बढ़ी बल्कि देश में संघवाद और मजबूत हुआ। जेटली इसे और आगे ले गए और राज्य सरकारों को बहुप्रतीक्षित वस्तु एवं सेवा कर व्यवस्था के लिए एकमत किया। जेटली की राजनीतिक क्षमताओं के सबसे बेहतर उदाहरणों में से एक है जीएसटी परिषद का सहज सुगम ढंग से काम करना। हर निर्णय आम सहमति से लेकर यह केंद्र राज्य सहयोग का आदर्श नमूना बन गई। जेटली ने जिन अन्य सुधारों को लागू किया उनमें ऋणशोधन अक्षमता एवं दिवालिया संहिता भी शामिल है जिसने पुरानी नाकाम व्यवस्था को समाप्त किया। हालांकि मामले लंबे खिंच रहे हैं लेकिन हालिया सुधारों के बाद यहां भी मामले समय पर निपटने शुरू होंगे। इससे अर्थव्यवस्था की ऋण संस्कृति में सुधार होगा और संसाधनों का बेहतर आवंटन शुरू होगा।

जेटली के कार्यकाल का एक अन्य अहम सुधार था रिजर्व बैंक के साथ मौद्रिक नीति समझौता और मुद्रास्फीति को लक्षित करने वाले ढांचे को अपनाना। मुद्रास्फीति को लक्ष्य बनाने से उसे तथा उससे जुड़े अनुमानों को सीमित रखने में मदद मिली है। इससे बीते वर्षों के दौरान सरकार का राजकोषीय घाटा कम करने में भी मदद मिली है। बहरहाल, जेटली के वित्त मंत्रालय को केंद्रीय बैंक के साथ निपटने में कुछ दिक्कतें भी रहीं। यह भी एक कारण था जिसके चलते रघुराम राजन को कार्य विस्तार नहीं मिला। जेटली ने फंसे हुए कर्ज की समस्या के लिए भी बैंकिंग नियामक को जवाबदेह ठहराया। राजन के उत्तराधिकारी ऊर्जित पटेल ने इसका विरोध भी किया। उसके बाद से रिश्ते बिगड़ते गए और पटेल को गवर्नर पद छोड़ना पड़ा। जीएसटी जैसे कुछ सुधारों में अभी प्रगति हो रही है। जेटली पर इन्हें हड़बड़ी में लागू करने का इल्जाम लगा। परंतु शायद ऐसा कहना उचित नहीं क्योंकि एक बार में एकदम सटीक कर व्यवस्था लाना शायद संभव नहीं था।

जेटली का जीवन उनके वित्त मंत्री के कार्यकाल से इतर भी था। उनके निधन के साथ ही भाजपा ने एक कुशल रणनीतिकार और देश ने एक मानवीय राजनेता खो दिया। उनके निधन से देश की राजनीति और सार्वजनिक जीवन में खाली हुई जगह को भरना मुश्किल है। वह क्रिकेट में रुचि रखते थे लेकिन स्वास्थ्यगत कारणों से उनकी पारी लंबी नहीं चली।

अजय मोहंती

गलत राह ले जाते हैं दक्षिणपंथ के मिथक

जम्मू कश्मीर को लेकर दक्षिणपंथ के पांच खतरनाक मिथकों को ध्वस्त करके ही कश्मीरियों के दिल और दिमाग को जीता जा सकता है।

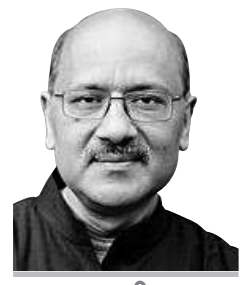

राष्ट्र की बात
शेखर गुप्ता

गत सप्ताह इस स्तंभ में हमने जम्मू कश्मीर को लेकर देश के उदारवादी समुदाय के पांच प्रमुख मिथकों को तथ्यों और हकीकत की कसौटी पर कसा था। तार्किक रूप से देखें तो अब हमें दक्षिणपंथी राष्ट्रवादियों की मान्यताओं के साथ भी यही करना चाहिए। यह समूह बहुत बड़ा है। नरेंद्र मोदी और भारतीय जनता पार्टी के मतदाता वर्ग से इसका अंदाजा लगाया जा सकता है। उनकी यह मान्यता है कि अनुच्छेद 370 और कश्मीरी नेताओं का दोहरापन, देश के उदारवादियों की राज्य सत्ता के सामूहिक अन्याय की धारणा से कहीं अधिक बड़ी समस्या है। दक्षिणपंथी राष्ट्रवादियों का यह जुनून तथ्यों और हकीकत की कम समझ से पैदा होता है।

ये मिथक चाहे वाम के हों, दक्षिण के या मध्यमार्गियों के, इनसे देश का कोई हित नहीं सधने वाला है। इनमें कश्मीर भी शामिल है। यही कारण है, हमें इन पर तथ्यों और तर्कों की रोशनी डालनी चाहिए। इसलिए क्योंकि मान्यताएं अच्छी होती हैं लेकिन अगर वे तथ्यात्मक न हों तो बहुत खतरनाक भी होती हैं। मैं कश्मीर को लेकर दक्षिणपंथ के पांच पसंदीदा मिथक प्रस्तुत कर रहा हूं।

1. पहला और प्रमुख मिथक यह है कि अनुच्छेद 370 और राज्य को मिला विशेष दर्जा ही समस्या की जड़ था। अब यह समाप्त हो चुका है और समस्या भी खत्म हो चुकी है। इतिहास बन चुका है और एक नया सवेरा सामने है।

अच्छी बात है लेकिन इतिहास बनने से पिछला इतिहास मिट नहीं जाता। अनुच्छेद 370 कश्मीर तथा राष्ट्रीय चेतना के लिए एक भावनात्मक मसला था लेकिन तथ्य यह है कि यह अस्थायी अनुच्छेद 69 वर्ष बाद मूल प्रावधान की छाया भी नहीं बचा था।

संभवत: विश्वनाथ प्रताप सिंह को छोड़कर देश के हर प्रधानमंत्री ने अनुच्छेद 370 को शिथिल किया। इस माह के आरंभ में मोदी सरकार द्वारा भंग किए जाते वक्त यह केवल औपचारिकता रह गया था। पहले के रक्षा, विदेश मामलों, वित्त और संचार के साथ-साथ अब संविधान के 395 में से 290 अनुच्छेद कश्मीर पर सीधे लागू हैं। हां, कुछ अड़चनें अवश्य बाकी थीं जिनमें आम भारतीयों को कश्मीर में संपत्ति और रोजगार का अधिकार न होना प्रमुख था। इसके अलावा गैर कश्मीरी व्यक्ति से शादी करने वाली कश्मीरी स्त्री को संपत्ति से बेदखल कर दंडित करना और ऐसे विवाह से उत्पन्न बच्चों को कश्मीरी होने का दर्जा न देना, तीन तलाक और दंड संहिता की धारा 377 का प्रदेश में लागू न होना आदि इसके उदाहरण हैं। यह अन्याय है लेकिन इसे अलगाव का मूल कारण मानना गलत है। अगले दो अहम मिथकों का संबंध पाकिस्तान से है। एक तो यह पाकिस्तान आक्रांता है जिसे निकाल बाहर करने की आवश्यकता है और दूसरा वह उकसाने का काम करता है।

2. दक्षिणपंथी राष्ट्रवादी बहस सन 1948 से यही कहती आई है: अगर भ्रमित नेहरू कश्मीर मसले को संयुक्त राष्ट्र में न ले गए होते तो भारतीय सेना गिलगित-बाल्टिस्तान समेत पूरा कश्मीर पाकिस्तान से छीन लेती। सबकुछ सरदार पटेल के हाथ में होता तो शायद ऐसा नहीं होता। हकीकत अलग है और क्योंकि यह असहज करने वाली है इसलिए यह बदल नहीं जाएगी। सन 1947-48 में दो मौसमों की लड़ाई के बाद जाड़े में दोनों सेनाएं गतिरोध पर थीं। दोनों देशों का सैन्य साहित्य पढ़ने पर समझा जा सकता है कि कैसे भौगोलिक स्थिति, जमीनी हालात, सैन्य शक्ति और स्थानीय समुदायों की स्थिति के कारण किसी के लिए भी आगे बढ़ना मुश्किल हो गया था। नवंबर दिसंबर में जब पहले चरण की लड़ाई शुरुआती दौर में थी तब शायद भारत उड़ी के पार मुजफ्फराबाद तक पहुंच सकता था। परंतु जब तक बनिहाल दर्रा बर्फ से बंद था, तब तक सैनिकों को हवाई या सड़क मार्ग से पहुंचाना संभव नहीं था। भारत और पाकिस्तान दोनों पक्षों से लोग यह दावा करते हैं कि सन 1948 में जीत संभव थी लेकिन यह कपोल कल्पना है।

स्मरण रहे कि यह जंग उस समय हुई जब दोनों सेनाओं का नेतृत्व ब्रिटिश प्रमुखों के पास था। भारत को उस समय पर्याप्त सैन्य बढ़त हासिल नहीं थी। विभाजन के वक्त पाकिस्तान को संयुक्त भारत का एक तिहाई सैन्य बल और अर्थव्यवस्था का छठा हिस्सा दिया गया था। आगे चलकर भले ही उसने मुल्क बरबाद कर लिया लेकिन सन 1947-48 में दोनों सेनाओं में इतना अंतर नहीं था कि हिमालय के पार वह चर्चित जीत हासिल हो जाती। क्या अब पाकिस्तान को उसके कब्जे वाले कश्मीर से बाहर निकाला जा सकता है? यह संभव नहीं है। सन 1948 से हम कई लड़ाइयां और झड़पों के साक्षी रह चुके हैं, इनमें दोनों पक्षों से हजारों जानें गई हैं परंतु सन 1971 को छोड़ दें तो दोनों पक्षों की सेनाएं कमोबेश बराबरी पर रहीं। सियाचिन भी निर्जन था और उस पर किसी का कब्जा नहीं था। उसे बिना लड़े हासिल कर लिया गया। असली लड़ाई में पाकिस्तानी सेनाएं रक्षात्मक युद्ध करने के लिए सक्षम हैं। ऐसे में 1948 में गंवाया इलाका वापस लेने और बांग्लादेश के तर्ज पर पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर को वापस लेना दोनों अतार्किक मिथक हैं।

3. पाकिस्तान के दुष्प्रचार से फैले वैचारिक प्रदूषण और इस्लामिक कट्टरपंथ को छोड़ दिया जाए तो कश्मीर के लोग आमतौर पर विनम्र, शांतिप्रिय और देशभक्त हिंदुस्तानी हैं। इनमें से पहला मामला अब नहीं है। 30 वर्ष के उपद्रव के शुरुआती चरणों में अधिकांश सैन्य लड़ाके पाकिस्तान से आते थे। बल्कि सन 1990 के दशक के आरंभ में आईएसएआई ने कई विदेशी जिहादी (अफ्रीकी और अरब देशों से) भेजे। अधिकांश स्थानीय कश्मीरी इनसे बहुत नफरत करते थे। बीते दशक में उपद्रवी अधिकांशतया स्थानीय रहे हैं। ये औसत युवा कश्मीरी नाराज और पीड़ित महसूस करते हैं और हथियार उठाने को तैयार हैं। हाल के वर्षों में विभिन्न घटनाओं में मृत या पकड़े गए आतंकी कश्मीरी हैं। ये स्थिति बदलेगी नहीं। घाटी में इतने हथियार मौजूद हैं कि छोटे आतंकी समूह चलते रह सकें। पाकिस्तान भी इनकी आपूर्ति जारी रखेगा। अनुच्छेद 370 का खात्मा और पुलिस पर नियंत्रण तथा मजबूत सुरक्षा के साथ केंद्र का शासन आतंकवाद को समाप्त नहीं कर सकेगा।

4. सभी कश्मीरियों को निवेश और आर्थिक विकास चाहिए: इस बात पर यकीन करना मानव मस्तिष्क को गलत समझना होगा। किसी भी तरह का आर्थिक विकास, केंद्र की सहायता आदि लोगों का दिमाग तब तक नहीं बदल सकते जब तक कि उनका सामूहिक गुस्सा, पीड़ा और अलग-थलग पड़ने की भावना खत्म न की जाए। संपत्ति खरीदकर और बाहरी लोगों को बसाकर, यहां की औरतों से विवाह कर कश्मीर का जनांकीय ढांचा बदलने की मूर्खतापूर्ण और दंभ भरी बातों से माहौल और खराब हो रहा है। जम्मू कश्मीर का यह भू-भाग हमेशा भारत के साथ था और कोई इसे छीन नहीं सकता। परंतु जब तक घाटी के लोग साथ नहीं है कुछ नया नहीं होने वाला है। आखिर में हम आते हैं सबसे संवेदनशील मिथक के बारे में जो सर्वाधिक आत्मघाती भी है।

5. वहां के आबादी के ढांचे को बदलने के बारे में सोचने वालों को इजरायल से सबक लेना चाहिए। अगर आप इजरायल से सबक लेंगे तो ऐसा करने का सोचेंगे भी नहीं। इजरायल दशकों से इस काम में लगा है और नाकाम है। उसे न तो शांति हासिल हुई, न ही भू-भाग पर उसका दावा मजबूत हुआ। भारत के पास भूभाग है, पाकिस्तान और चीन को छोड़कर दुनिया का कोई देश इसे विवादित नहीं मानता। इजरायल जहां यहूदी देश है, वहीं भारत एक धर्मनिरपेक्ष गणराज्य है।

इतना ही नहीं यह मामला पुरानी दिल्ली के दो मोहल्लों, चंडीगढ़ अथवा गुरुग्राम के किसी सेक्टर की आबादी का ढांचा बदलना नहीं है। इसके लिए करोड़ों हिंदुओं को घाटी में बसाना होगा। यह कभी नहीं होगा। यह चीन नहीं है जहां आप लाखों लोगों को एक जगह से दूसरी जगह ले जाकर बसा दें। इसके बावजूद चीन तिब्बत या शिनच्यांग में शांति नहीं स्थापित कर सका। न ही इजरायल को ऐसा करने से सुरक्षा या स्थिरता हासिल हुई।

भारत के बारे में अलग बात यह है कि हम विविधता को आसानी से अपना सकते हैं। कश्मीर के लिए यही सबसे बेहतर होगा। दिलों और दिमाग की लड़ाई अब भी वही है: क्या भारत उन्हें पाकिस्तान से बेहतर पेशकश कर रहा है? उनके आत्मसम्मान, प्रभुता और उनकी पहचान के बचाव के साथ? अनुच्छेद 370 से निजात पाना अच्छा है, यह लंबे समय से लंबित था। आगे की राह वाजपेयी के तरीकों से सीखकर निकलेगी न कि शी चिनफिंग के।

कॉर्पोरेट क्षेत्र में बेहतर संचालन मानक स्थापित करे सरकार

जिंदगीनामा
कनिका दत्ता

प्रधानमंत्री ने पिछले दिनों लाल किले के प्राचीर से कहा कि देश के परिसंपत्ति निर्माताओं को संदेह की दृष्टि से नहीं देखा जाना चाहिए क्योंकि जब वे परिसंपत्ति बनाएंगे तभी उसका वितरण किया जा सकेगा। सामान्य परिस्थितियों में इस बयान को अनापत्तिजनक माना जाता लेकिन मौजूदा परिदृश्य में इसके लिए चुना गया समय अनुकूल नहीं है।

हमारा मानना है कि संपत्ति निर्माताओं से प्रधानमंत्री का तात्पर्य भारतीय उद्यमियों से था। पांच दिन बाद वित्त मंत्री ने इस शब्द को ऐसे ही परिभाषित किया। क्या वाकई यह संभव है कि इन परिसंपत्ति निर्माताओं को संदेह की दृष्टि से न देखा जाए?

नीरव मोदी से लेकर आईएलऐंडएफएस और अवांता समूह तक कारोबारी धोखाधड़ी जैसे तमाम मामले बीते दो साल से लगभग हर महीने सुर्खियों में रहे हैं। अगर हम बीते 15 वर्ष को ध्यान में रखें तो रामलिंग राजू की स्वीकारोक्ति से हुई शुरुआत के बाद आशंका की वजह दोगुनी हो गई है। प्रधानमंत्री भले ही ऐसा कह रहे हों लेकिन उनके कार्यकाल में प्रवर्तन एजेंसियां परिसंपत्ति निर्माण को लेकर खासा संदेह करती नजर आ रही हैं। जब कॉर्पोरेट जगत से मोदी के कट्टर समर्थक मोहनदास पई जैसे लोग सार्वजनिक रूप से कर आतंकवाद की शिकायत करने लगें तो समझना चाहिए कि हालात वाकई गंभीर है। कैफे कॉफी डे के संस्थापक वी जी सिद्धार्थ की मृत्यु और कथित रूप से उनके पत्र में कर अधिकारियों द्वारा परेशान किए जाने की शिकायत की बात सामने आने के बाद पई ने ऐसा कहा था। तात्कालिक संदर्भ से इतर प्रधानमंत्री का वक्तव्य एक अहम प्रस्थान बिंदु को परिलक्षित करता है। अतीत का कोई प्रधानमंत्री अमीरों के उद्देश्य को यूं सार्वजनिक रूप से उद्घाटित करने की हिम्मत नहीं करता। इसकी जड़ें ऐतिहासिक हैं। एक समय में वालचंद से लेकर टाटा और बिरला जैसे कारोबारियों ने खूब संपत्ति बनाई। इसमें दो विश्व युद्धों से मिले अवसर भी शामिल थे। हालांकि यह भी सही है कि इन उद्यमियों ने स्वतंत्रता संघर्ष को भी धन मुहैया कराया। यह स्पष्ट था कि उनके परिसंपत्ति निर्माण ने गरीब मुल्क में संपत्ति वितरण की कोई राह नहीं बनाई। उस दौर के दुनिया के तमाम अन्य बुद्धिजीवियों की तरह देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू भी सोवियत आर्थिक मॉडल से बहुत प्रभावित थे। स्टालिन के सुधारों का जायजा लेने के बाद तो उन्हें इस बात का और यकीन हो गया था कि राज्य के नेतृत्व वाली अर्थव्यवस्था ही देश को उबार सकती है।

पीसी महालनोबिस और योजना आयोग के चलते देश के आर्थिक मॉडल में चीन के उस सरकारी पूंजीवाद की कोई छाया नहीं नजर आई जो दो दशक बाद उभरी और जिसके चलते चीन भारत से आगे निकल गया। महालनोबिस के मॉडल में बहुत अधिक नियंत्रण की व्यवस्था थी जिसके चलते कारोबारी लालफीताशाही में उलझे रहते और इसके कारण आर्थिक गतिविधियों या परिसंपत्ति वितरण का कोई प्रभाव नजर नहीं आता। उदारीकरण के पहले देश की धीमी आर्थिक वृद्धि दर ने देश को गरीब बनाए रखा। इंदिरा गांधी ने देश की गरीबी में राजनीतिक अवसर पहचाना और संरक्षणवाद, राष्ट्रीयकरण और लाइसेंस-परमिट राज के जरिये खुद को मजबूत किया। गरीबी हटाओ के चुनावी नारे के पीछे एक बात छिप गई कि मोटे तौर पर परिसंपत्ति निर्माण भ्रष्ट राजनेताओं और अफसरशाहों के स्तर पर हो रहा था। गरीबी को ऐसे शायद ही कभी भुनाया गया था। परिसंपत्ति निर्माण करने वालों को लेकर संदेह की जड़ें इसी आर्थिक मॉडल में निहित हैं। इन वजहों ने कुछ कारोबारी समूहों को प्रतिस्पर्धियों पर बढ़त हासिल करने के लिए राजनीतिक रिश्ते कायम करने के लिए प्रोत्साहित किया या कहें मजबूर किया। ऐसा करके उन्होंने विदेशी और घरेलू प्रतिस्पर्धा से निजात पाई। वाहन उद्योग को इसके लिए जाना जाता है। कारोबार और राजनीति के इस गठजोड़ ने एक दुष्चक्र को जन्म दिया। ढांचागत गतिरोधों के कारण कारोबारी वृद्धि धीमी बनी रही। करों के कारण उद्यम चलाना व्यवहार्य नहीं रह गया। उच्च कर दरों के कारण कर वंचना भी बढ़ने लगी। जिनके पास निर्यात लाइसेंस था, उन्होंने भारी मात्रा में धन को विदेशी टैक्स हैवन में ठिकाने लगा दिया।

ऐसे में एक ऐसा राजनेता सामने आया जिसने इन परिसंपत्ति निर्माताओं को संदेह की दृष्टि से देखा। राजीव गांधी की सरकार में वित्त मंत्री रहे विश्वनाथ प्रताप सिंह की काली सूची ने कारोबारी समुदाय को बुरी तरह भयभीत कर दिया। यह सही है कि आर्थिक सुधारों ने देश के उद्यमी जगत को किफायती और उत्पादक बनाया। उसने इसे विस्तार का अवसर दिया और कुछ हद तक पुनर्वितरण की स्थिति तैयार की। कमजोर शुल्क दर और लाइसेंस व्यवस्था खत्म करने से कुछ हद तक आर्थिक विस्तार का अवसर दिया और लोगों को अपेक्षाकृत समृद्ध बनाया। पहली बार परिसंपत्ति निर्माण वैध था और उसकी सराहना की जा रही थी। यह महत्त्वाकांक्षा में तब्दील हो रहा था लेकिन राजनीतिक वर्ग अभी भी इस संदेश से दूरी बना रहा था। संप्रग सरकार गरीब समर्थक बनी रही जबकि इस बीच लाखों की तादाद में लोग गरीबी के भंवर से बाहर निकले।

आज दिक्कत यह है कि कारोबारी जगत के पुराने प्रमुख परिसंपत्ति निर्माता अभी भी लाइसेंस राज से जूझ रहे हैं। चार दशक के दंडात्मक कराधान और सीमित प्रतिस्पर्धा ने इन बातों को देश के कारोबारी प्रशासन मानक के डीएनए में शामिल कर दिया। कर वंचना, परिवार आधारित कारोबारी ढांचा, बोर्ड की अवमानना और सरकारी बैंकिंग का गलत इस्तेमाल करना आदि आज भी वैसे ही हैं जैसे कि सन 1991 के पहले थे।

अब निजी क्षेत्र आर्थिक वृद्धि का वाहक है। मोदी ने स्वतंत्रता दिवस के दिन जो बात कही वह सच की समझ को दर्शाता है। उन्हें ऐसा माहौल देने की कोशिश करनी चाहिए जिसमें कॉर्पोरेट क्षेत्र अच्छी तरह विकसित हो और वैध तरीके से प्रतिस्पर्धा करे। सरकार को बेहतर संचालन मानक स्थापित करने चाहिए। फिलहाल ऐसा नहीं नजर आ रहा है।

कानाफूसी

भाजपा के चुनाव

दुनिया के सबसे बड़े राजनीतिक दल यानी भारतीय जनता पार्टी के चुनाव करीब हैं और इन चुनावों का पर्यवेक्षण करेंगे पार्टी के राष्ट्रीय निर्वाचन अधिकारी राधा मोहन सिंह। वह केंद्रीय कृषि मंत्री रह चुके हैं। चुनाव प्रक्रिया की शुरुआत बूथ स्तर की इकाइयों के चुनाव से होगी। इसके बाद ब्लॉक स्तर के अध्यक्ष चुने जाएंगे। यह प्रक्रिया 30 सितंबर तक पूरी कर ली जाएगी। इसके पश्चात जिला स्तर पर अध्यक्षों का निर्वाचन होगा। यह प्रक्रिया 30 नवंबर तक चलेगी। जिलाध्यक्षों का चुनाव होने के बाद प्रदेश अध्यक्षों के चुनाव की प्रक्रिया शुरू होगी। सबसे अंत में पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष का चुनाव संपन्न होगा। इस चुनाव प्रक्रिया में सबसे विवादित विषय होगा प्रदेश अध्यक्षों का चुनाव। सबकी नजर उन राज्यों पर रहेगी जहां वास्तव में ये चुनाव होंगे। क्योंकि तभी यह पता चल सकेगा कि कौन सा धड़ा मजबूत है और कौन सा कमजोर?

भाजपा में सावन

सावन चटर्जी को भारतीय जनता पार्टी में शामिल किए जाने के बाद पार्टी की पश्चिम बंगाल इकाई में उत्सुकता का माहौल है। चटर्जी दो बार कोलकाता नगर निगम के मेयर रह चुके हैं। वह ममता बनर्जी के मंत्रिमंडल में भी महत्त्वपूर्ण दायित्व संभाल चुके हैं। चटर्जी दक्षिण 24 परगना जिले में तृणमूल के अध्यक्ष रह चुके हैं और उन्हें 2011 के विधानसभा चुनाव में ममता की जीत सुनिश्चित करने वाले प्रमुख रणनीतिकारों में भी गिना जाता है। हालिया लोकसभा चुनाव में भाजपा को दक्षिण 24 परगना की पांच में से एक भी लोकसभा सीट पर जीत नहीं मिली। जिले में इसके अलावा 31 विधानसभा सीटें भी हैं। माना जा रहा है कि भविष्य में चटर्जी निर्णायक साबित हो सकते हैं।

आपका पक्ष

अनुपयोगी साबित होते अंडरब्रिज

सड़कों को रेलवे क्रॉसिंग मुक्त बनाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारें अपने-अपने स्तर पर द्रुत गति से कार्य कर रही हैं। केंद्र सरकार भारतमाला परियोजना के तहत महत्त्वपूर्ण स्थलों को जोड़ने वाले राष्ट्रीय राजमार्गों पर कार्य कर रही है। संबंधित राज्य सरकारें राज्य राजमार्ग व जिला व ग्रामीण सड़कों पर कार्य कर रहीं हैं। बहुत से स्थान पर रेलवे लाइन के ऊपर से ओवरब्रिज व काफी जगहों पर ओवरब्रिज न बना कर अंडरब्रिज बनाए जा चुके हैं। एक ओर जहां ओवरब्रिज हर दिन हर मौसम में आम जनता को लाभ पहुंचा रहे हैं तथा मालवाहक वाहनों और यात्रियों की समय व ऊर्जा दोनों की बचत में योगदान कर रहे हैं। दूसरी ओर अधिकांश स्थलों पर बने अंडरब्रिज बारिश के मौसम में आम जनता के लिए सर दर्द साबित हो रहे हैं। निर्माण में लगे इंजीनियरों की अदूरदर्शिता का परिणाम है कि ऐसे स्थलों पर अंडर ब्रिज बना दिए

बारिश के बाद रेलवे के अंडरब्रिज में जलभराव के कारण वाहनों का आवागमन नहीं हो पाता है

गए जहां बारिश के मौसम में जलभराव का स्वाभाविक अनुमान लगाया जा सकता है। जलमग्न अंडरब्रिज से यातायात बाधित होने और किसी वाहन के आंशिक रूप से डूबने की खबरें आए दिन स्थानीय अखबारों की सुर्खियां बन रही हैं। जनता में असंतोष के कारण कानून व्यवस्था बिगड़ने के हालात बन जाते हैं। जनता को इस समस्या से निजात दिलाने के उपचार करने होंगे। यह रेल प्रशासन, स्थानीय प्रशासन व निर्माण एजेंसियों को मिलकर यह सुनिश्चित करना चाहिए कि भविष्य में नए अंडर ब्रिज बनाने में ऐसे स्थलों का चयन किया जाए जहां जलभराव की संभावना नगण्य हों। वर्तमान में उपयोग में लाए जा रहे अंडरब्रिज में बारिश के कारण हो रहे जलभराव को रोकने के लिए स्थानीय प्रशासन को आगे आकर उच्च क्षमता की जल निकासी पंप की व्यवस्था करनी चाहिए।

ऋषभ देव पांडेय, छत्तीसगढ़

देश में रोजगार और इसके आंकड़े

कर्मचारी राज्य बीमा निगम (ईएसआईसी) के आंकड़े के अनुसार जून माह में 12.19 लाख रोजगार के अवसर का सृजन हुआ है। राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एनएसओ) के अनुसार 2018-19 में ईएसआईसी में 1.49 करोड़ नए अंशधारक जुड़े हैं। रिपोर्ट के मुताबिक सितंबर 2017 से मार्च 2018 तक ईएसआईसी में 86.73 लाख अंशधारक जुड़े हैं। एनएसओ के यह आंकड़े कर्मचारी भविष्य निधि संगठन (ईपीएफओ) तथा पेंशन कोष नियामक एवं विकास प्राधिकरण (पीएफआरडीए) द्वारा संचालित विभिन्न सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के नए अंशधारकों के वेतन रजिस्टर पर आधारित है। इस आंकड़े को मानें तो पिछले एक साल में केवल 1.5 करोड़ लोगों को रोजगार मिला है। वहीं ईएसआईसी के आंकड़े को मानें तो जून माह में 12.19 लाख लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ है। आईएसआईसी में वैसे लोगों का पंजीयन होता है जिनकी मासिक आय 15 हजार रुपये से कम है। ईएसआई में 15 हजार रुपये तक मासिक वेतन पाने वाले का पंजीयन किया जाता है। निजी कंपनियां जितनी तेजी से कर्मचारियों की नियुक्ति करती हैं उतनी ही तेजी से उन्हें नौकरी से निकालती भी हैं। असल में रोजगार के आंकड़े पेश कर देश के बेरोजगारों को सिर्फ दिलासा ही दिलाई जा रही है।

भरत कुमार, लखनऊ

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।